SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

एक राष्ट्र, एक चुनाव

प्रशांत कुमार, शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावाटी विश्वविद्यालय सीकर, राजस्थान, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
प्रशांत कुमार, शोधार्थी
E-mail : prashantjanu1986@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 09/08/2025
Revised on : 06/10/2025
Accepted on : 15/10/2025
Overall Similarity : 00% on 07/10/2025

शोध सार

"एक राष्ट्र, एक चुनाव" भारतीय लोकतंत्र के लिए एक प्रगतिशील, व्यवहारिक और संरचनात्मक सुधार की संकल्पना है, जिसका मूल उद्देश्य केंद्र और राज्य स्तर पर चुनावों को एक साथ कराकर लोकतांत्रिक प्रक्रिया को अधिक संगठित, पारदर्शी, किफायती और प्रभावी बनाना है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रारंभिक वर्षों में भारत में लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ ही कराए जाते थे, किंतु 1967 के बाद राजनीतिक अस्थिरता, सरकारों के समय से पहले विघटन और अलग–अलग राज्यों की राजनीतिक संरचना के कारण यह क्रम टूट गया। आज स्थिति यह है कि हर वर्ष किसी न किसी राज्य में चुनाव होते हैं, जिससे सरकारी खर्च में भारी वृद्धि होती है, प्रशासनिक तंत्र पर बोझ बढ़ता है, आचार संहिता के कारण योजनाएं ठप्प हो जाती हैं और राजनीतिक दल लगातार चुनावी मोड में रहते हैं। यदि लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए जाएँ तो इससे वित्तीय खर्च में कमी, प्रशासनिक दक्षता में वृद्धि, सरकारी नीतियों की निरंतरता, मतदाता सहभागिता में बढ़ोतरी, और चुनावी भ्रष्टाचार में कमी देखी जा सकती है, इसके अतिरिक्त राजनीतिक दल भी व्यापक नीति एजेंडा के साथ सामने आ सकेंगे, जिससे विचारधारा आधारित राजनीति को बल मिलेगा। वहीं दूसरी ओर, इस परिकल्पना के क्रियान्वयन में कई संवैधानिक, व्यवहारिक और संघीय चुनौतियाँ भी निहित हैं। संविधान के कई अनुच्छेदों में संशोधन करना आवश्यक होगा, राज्यों की स्वायत्तता, कार्यकाल का समायोजन, और राजनीतिक सहमति सुनिश्चित करना अत्यंत कठिन कार्य है। इसके अतिरिक्त एक साथ चुनाव कराने के लिए ईवीएम, वीवीपैट, सुरक्षा बल, मानव संसाधन, मतदाता शिक्षा जैसे विषयों पर भी विस्तृत तैयारी अपेक्षित है। वर्तमान में केंद्र सरकार ने "एक राष्ट्र, एक चुनाव" के मुद्दे

पर गंभीर पहल करते हुए पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया है, जो इसकी व्यवहार्यता और कार्यान्वयन योजना पर कार्य कर रही है। चुनाव आयोग, विधि आयोग, नीति आयोग, और राज्य सरकारों से परामर्श की प्रक्रिया जारी है। कुछ राज्य सरकारें और राजनीतिक दल इस प्रस्ताव के पक्ष में हैं, जबकि कुछ इसे संघीय ढांचे के विरुद्ध मानते हुए विरोध कर रहे हैं। "एक राष्ट्र, एक चुनाव" एक उचित और समयानुकूल सुधारात्मक कदम है, जिसे यदि चरणबद्ध ढंग से, सर्वदलीय सहमति के साथ, और संविधान की मर्यादाओं के भीतर रहते हुए लागू किया जाए, तो यह भारत के लोकतंत्र को अधिक सक्षम, सशक्त और जनोन्मुखी बना सकता है।

मुख्य शब्द

राष्ट्र, चुनाव, मानव संसाधन, प्रशासन.

प्रस्तावना

भारत एक विशाल और विविधताओं से परिपूर्ण लोकतांत्रिक गणराज्य है, जहाँ बहुदलीय प्रणाली के अंतर्गत समय–समय पर चुनावों के माध्यम से सरकारों का गठन होता है। भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी विशेषता इसकी जनसांख्यिकीय बहुलता और चुनावी भागीदारी की व्यापकता है, जिसमें देश के लगभग 90 करोड़ से अधिक मतदाता अपनी सहभागिता निभाते हैं परंतु, इस लोकतांत्रिक प्रक्रिया की जटिलता, बार–बार होने वाले चुनावों के कारण प्रषासन, षासन व्यवस्था और संसाधनों पर गहरा प्रभाव डालती रही है।

वर्तमान में देश में लगभग हर वर्ष किसी न किसी राज्य में विधानसभा चुनाव होते रहते हैं, इसके अतिरिक्त पंचायत, नगरीय निकाय, उपचुनाव और राष्ट्रपति, राज्यसभा जैसी संवैधानिक संस्थाओं के लिए भी चुनाव कराए जाते हैं। इन सभी प्रक्रियाओं में चुनाव आयोग, सरकार, पुलिस, प्रशासन और मीडिया की भारी भागीदारी होती है। इससे न केवल वित्तीय और प्रशासनिक बोझ बढ़ता है, बल्कि सरकारों को अपने कार्यकाल में कई बार चुनावी आचार संहिता के कारण नीतिगत निर्णयों में स्थगन का सामना करना पड़ता है।

इसी परिप्रेक्ष्य में "एक राष्ट्र, एक चुनाव" अर्थात् One Nation, One Election की अवधारणा ने हाल के वर्षों में अभूतपूर्व ध्यान आकर्षित किया है। इस विचार का मूल उद्देश्य है कि लोकसभा और समस्त राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक ही समय पर कराए जाएं, जिससे चुनावी प्रक्रिया में पारदर्षिता, दक्षता और सुगमता लाई जा सके तथा सरकारी और गैर–सरकारी संसाधनों का समुचित उपयोग सुनिष्चित किया जा सके।

यह विचार कोई नवीन संकल्पना नहीं है। स्वतंत्र भारत में 1951–52 से लेकर 1967 तक चार आम चुनावों के दौरान लोकसभा और सभी राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए गए थे। यह प्रणाली सुसंगठित और संतुलित थी, लेकिन बाद में राजनीतिक अस्थिरता, विधानसभाओं का असमय विघटन, और आपातकाल जैसी परिस्थितियों के कारण यह चक्र टूट गया। परिणामस्वरूप भारत में चुनाव एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया बन गए, जिससे सरकारी कामकाज, नीतिगत निर्णय, प्रशासनिक कार्यान्वयन और विकास परियोजनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगा।

एक राष्ट्र, एक चुनाव का प्रस्ताव पहली बार 1999 में लॉ कमीशन द्वारा गंभीर रूप से विचाराधीन लाया गया था, जिसे 2018 की रिपोर्ट में और अधिक विस्तार और औपचारिक रूप दिया गया। हाल ही में, वर्ष 2023 में भारत सरकार द्वारा गठित पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद समिति ने इस विचार को संस्थागत रूप देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बढ़ाया है।

इस विचार के समर्थन में यह तर्क दिया जाता है कि इससे राजनीतिक स्थिरता, विकास की निरंतरता, मतदाता भागीदारी में वृद्धि, और चुनावी व्यय में कमी संभव हो सकेगी। इसके विपरीत आलोचक इसे संविधान की संघीय आत्मा के विरुद्ध, राज्यों की स्वायत्तता का हनन, और प्रशासनिक रूप से अव्यवहारिक बताते हैं।

भारत जैसे विविधतापूर्ण, भाषाई, सांस्कृतिक और राजनीतिक दृष्टि से विभाजित राष्ट्र में एकसमान चुनावी समय–सारणी को लागू करना न केवल एक विधिक चुनौती है, बल्कि यह राजनीतिक सहमति, संवैधानिक संशोधन, और प्रशासनिक तैयारी की भी माँग करता है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य "एक राष्ट्र, एक चुनाव" के विचार को गहराई से समझना, इसके इतिहास, व्यवहारिक पक्ष, संवैधानिक जटिलताओं, संभावित लाभों और चुनौतियों का विस्तृत विश्लेषण करना है। यह विषय न केवल वर्तमान भारतीय राजनीति के लिए प्रासंगिक है, बल्कि यह भारतीय लोकतंत्र की दिषा और भविष्य को आकार देने वाला एक नीतिगत विमर्श भी है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि इस पर बहुस्तरीय चिंतन, शोध और संवाद किया जाए, ताकि इसका कार्यान्वयन लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों के अनुरूप हो सके।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

"एक राष्ट्र, एक चुनाव" की अवधारणा भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में कोई नया विचार नहीं है। वास्तव में, यह उस लोकतांत्रिक व्यवस्था का ही हिस्सा रहा है जिसे स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रारंभिक दशकों में सफलतापूर्वक अपनाया गया था। भारत की लोकतांत्रिक प्रणाली, जो संविधान की प्रस्तावना में वर्णित 'संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य' के आदर्शों पर आधारित है, ने चुनावों को जनता की संप्रभुता की अभिव्यक्ति का सबसे प्रभावी माध्यम माना है।

भारत का संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ, और इसके अनुच्छेद 83(2) एवं 172(1) के अंतर्गत संसद और राज्य विधानसभाओं की अवधि 5 वर्ष निर्धारित की गई। इसी संवैधानिक व्यवस्था के तहत 1951–52 में भारत में पहला आम चुनाव आयोजित हुआ, जिसमें लोकसभा और सभी राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए गए।

यह एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक उपलब्धि थी, क्योंकि एक नवस्वतंत्र राष्ट्र, जिसने सदियों बाद लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को अपनाया था, इस जटिल व्यवस्था को सफलता के साथ क्रियान्वित करने में सक्षम रहा। इसमें 17 करोड़ से अधिक मतदाताओं ने भाग लिया, और देश ने यह सिद्ध किया कि भारतीय जनता लोकतंत्र के आदर्शों को आत्मसात करने में सक्षम है।

इसके पश्चात् 1957, 1962 और 1967 में भी लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव समवर्ती रूप से ही संपन्न हुए। इस व्यवस्था के अंतर्गत निर्वाचन आयोग एक ही समय में देश के सभी हिस्सों में चुनाव कार्यक्रम घोषित करता था, और मतदाता एक ही दिन या सप्ताह में अपने लोकसभा और विधानसभा प्रतिनिधियों का चुनाव करते थे।

भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में 1967 को एक महत्वपूर्ण मोड़ के रूप में देखा जाता है। इस वर्ष, देश में राजनीतिक समीकरण तेजी से बदले। कई राज्यों में गठबंधन सरकारें बनीं और बहुमत खोने के कारण विधानसभाएं कार्यकाल से पूर्व भंग कर दी गईं। इसी समय केंद्र में भी स्थायित्व की समस्या उत्पन्न हुई।

1970 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने लोकसभा को समय से पहले भंग कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप 1971 में आम चुनाव हुए। वहीं, कई राज्यों में विधानसभाएं अपने पाँच वर्षीय कार्यकाल के अनुसार चल रही थीं। इससे केंद्र और राज्यों के चुनावों के समय में अंतर आने लगा।

इसके बाद 1975–77 के आपातकाल की अवधि ने भारत की चुनाव प्रणाली को और अधिक प्रभावित किया। आपातकाल के दौरान संविधान के कई प्रावधानों का निलंबन हुआ और 1977 में जब चुनाव कराए गए, तो वह लोकसभा और अनेक राज्यों की विधानसभाओं के निर्धारित समय से अलग हुए। इस स्थिति ने एक साथ चुनावों की परंपरा को निर्णायक रूप से तोड़ दिया।

1977 के बाद से भारत में कई राज्यों में राजनीतिक अस्थिरता, गठबंधन सरकारों की असफलता और राष्ट्रपति शासन की बारंबारता के कारण विधानसभाओं का कार्यकाल असमय समाप्त होने लगा। फलतः राज्य चुनावों की समय–सारणी बिखर गई और देष में एक स्थायी 'विखंडित चुनावी संस्कृति' विकसित हो गई।

अब स्थिति यह हो गई कि भारत में लगभग हर वर्ष एक या एक से अधिक राज्यों में चुनाव होने लगे, जिससे निर्वाचन आयोग, प्रशासन, सुरक्षा बल और मतदाता निरंतर चुनावी मोड में बने रहने लगे।

भारत में 1999 में विधि आयोग (Law Commission) ने अपनी 170वीं रिपोर्ट में "एक साथ चुनाव" के विचार को दोबारा उठाया और इसके संभावित लाभों की चर्चा की। रिपोर्ट में यह इंगित किया गया कि निरंतर चुनाव होने से विकास कार्यों में रुकावट आती है, और आचार संहिता के प्रभाव से सरकारें निष्क्रिय हो जाती हैं।

हालांकि इस सुझाव पर उस समय कोई राजनीतिक आम सहमति नहीं बन सकी, लेकिन इसके बाद इसे धीरे–धीरे नीति निर्धारण से जुड़े मंचों पर विमर्श के लिए लाया गया।

2014 में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने "एक राष्ट्र, एक चुनाव" को सार्वजनिक रूप से उठाया और इसे व्यवस्था सुधार का अभिन्न अंग बताया। इसके बाद यह विचार नीतिगत और राजनीतिक चर्चाओं में बार–बार आया। केंद्र सरकार ने चुनाव आयोग, नीति आयोग, विधि आयोग और अन्य संस्थानों से इस पर विचार–विमर्श प्रारंभ किया।

2016 में नीति आयोग ने अपनी रिपोर्ट में इस विचार को सैद्धांतिक समर्थन देते हुए कहा कि भारत जैसे विशाल लोकतंत्र में बार–बार चुनाव कराना संसाधनों की बर्बादी है और इससे शासन में रुकावट आती है।

2018 में विधि आयोग ने अपनी 21वीं रिपोर्ट में एक विस्तष्त खाका तैयार कर सरकार को सुझाव दिया कि इसे चरणबद्ध रूप से लागू किया जा सकता है। आयोग ने इसके लिए संवैधानिक संषोधनों, राजनीतिक दलों की सहमति, और आवष्यक कानूनी व्यवस्था का प्रस्ताव दिया।

कोविंद समिति का गठन – औपचारिक कदम

सितंबर 2023 में केंद्र सरकार ने पूर्व राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया, जिसका उद्देश्य थाः

- एक राष्ट्र, एक चुनाव की व्यवहार्यता का परीक्षण, संवैधानिक प्रावधानों में अपेक्षित संशोधनों की पहचान, सभी हितधारकों से सुझाव और परामर्श।
- यह समिति विभिन्न राज्यों के मुख्यमंत्रियों, निर्वाचन आयोग, पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्तों, राजनीतिक दलों, न्यायविदों और प्रशासनिक विशेषज्ञों से संवाद कर रही है।
- "एक राष्ट्र, एक चुनाव" का विचार भारत के लोकतांत्रिक विकास की एक ऐतिहासिक पुनरावष्त्ति है, जिसे शुरुआती दशकों में सफलता पूर्वक अपनाया गया था। किंतु राजनीतिक अस्थिरता, संवैधानिक विसंगतियाँ और शासन की जटिलताएं इस व्यवस्था को बनाए रखने में बाधक बन गईं। आज यह विशय एक बार फिर व्यापक जन विमर्ष और नीति–निर्माण के केंद्र में है। इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि यह सिद्ध करती है कि यह विचार न केवल व्यावहारिक रहा है, बल्कि यदि आवश्यक संरचनात्मक सुधार और राजनीतिक इच्छाषक्ति हो तो इसे दोबारा लागू करना संभव है।

"एक राष्ट्र, एक चुनाव" की परिकल्पना

"एक राष्ट्र, एक चुनाव" (One Nation, One Election) भारतीय लोकतंत्र के लिए एक संरचनात्मक सुधार की परिकल्पना है, जिसका उद्देश्य देश की चुनावी प्रणाली को अधिक संगठित, आर्थिक रूप से व्यावसायिक, प्रशासनिक रूप से सक्षम, और जनहितकारी बनाना है। यह विचार इस अवधारणा पर आधारित है कि लोकसभा (केंद्र) और समस्त राज्य विधानसभाओं (राज्य) के चुनाव एक ही समय पर कराए जाएं, जिससे देश में एक सतत् और सुचारु शासन प्रणाली को बढ़ावा मिले।

इस प्रस्ताव का मूल विचार यह है कि देष की संसदीय और राज्यीय विधायिकाओं के चुनाव एक ही समय पर – एक ही अवधि में – एक ही प्रक्रिया के तहत संपन्न हों, जिससे बार–बार चुनावों से उत्पन्न होने वाली वित्तीय, प्रशासनिक, राजनीतिक और नीतिगत अस्थिरता को रोका जा सके।

"एक राष्ट्र, एक चुनाव" की परिकल्पना का आधार निम्नलिखित बिंदुओं में निहित है:

- लोकतांत्रिक प्रणाली का उद्देश्य नागरिकों को सुशासन और स्थायित्व प्रदान करना है। बार–बार चुनावों से जनता, राजनीतिक दल और शासन व्यवस्था हमेशा चुनावी मुद्रा में रहती है, जिससे नीतिगत निर्णय प्रभावित होते हैं।
- बार–बार आचार संहिता लागू होने से सरकारें नई योजनाएं लागू नहीं कर पातीं। एक साथ चुनाव होने पर शासन अपनी योजनाओं को पूर्ण रूप से लागू कर सकेगा।
- चुनावों पर अत्यधिक खर्च सरकार और राजनीतिक दलों दोनों के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुका है। यदि चुनाव एक बार में हों, तो खर्च में भारी कमी लाई जा सकती है।
- जब बार–बार चुनाव होते हैं तो मतदाता की भागीदारी घटती है। एक साथ चुनाव होने से व्यापक प्रचार–प्रसार और जागरूकता के जरिए मतदान प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है।

परिकल्पना का प्रस्तावित प्रारूप

''एक राष्ट्र, एक चुनाव'' की कार्यान्वयन प्रक्रिया के लिए विभिन्न मॉडल प्रस्तावित किए गए हैं। इसके तहत निम्नलिखित संभावनाएं सामने रखी गई हैं:

(क) पूर्ण समवर्ती चुनाव: लोकसभा और सभी राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए जाएं। सभी निर्वाचनों की अधिसूचना एक ही दिन या अवधि में जारी हो। मतदान एक ही चरण या सीमित चरणों में संपन्न हो।

(ख) दो चरणीय समवर्ती चुनाव: सभी राज्यों को दो समूहों में बांटकर एक समूह के साथ लोकसभा चुनाव और दूसरे समूह के साथ अगले लोकसभा चुनाव के बीच चुनाव कराना। यह मॉडल लचीला होगा और इसे चरणबद्ध रूप में लागू किया जा सकता है।

(ग) आंशिक समवर्ती चुनाव: केवल कुछ राज्यों के चुनाव लोकसभा के साथ कराए जाएं जिनका कार्यकाल पास में समाप्त हो रहा हो। समय के साथ शेष राज्यों को इस प्रक्रिया में समाहित किया जाए।

विधिक और प्रशासनिक मूलाधार

इस परिकल्पना की सफलता के लिए संविधान और चुनावी अधिनियमों में आवश्यक बदलाव अपेक्षित हैं। जैसे:

- **संविधान के अनुच्छेद 83 और 172 में संशोधन:** जिससे संसद और विधानसभाओं की अवधि को लचीले रूप में समायोजित किया जा सके।
- **जनप्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 में संशोधन:** ताकि चुनावों की समय–सारणी को एकरूपता दी जा सके।
- **अनुच्छेद 85 और 174 में संशोधन:** ताकि संसद और विधानसभाओं को भंग करने की शक्ति एक समन्वित प्रणाली के अनुसार दी जा सके।
- **नई चुनावी अधिसूचना प्रणाली:** एक एकीकृत अधिसूचना द्वारा देशभर में चुनावी प्रक्रिया का संचालन।

परिकल्पना के पक्ष में तर्क

- **प्रशासनिक सुविधा:** प्रशासनिक अधिकारियों, सुरक्षाबलों और चुनाव आयोग की दक्षता बढ़ेगी।
- **व्यय में बचत:** बार–बार चुनावों पर होने वाला हजारों करोड़ का खर्च घटेगा।
- **नीति निर्माण में निरंतरता:** आचार संहिता बार–बार लागू नहीं होगी, योजनाओं में रुकावट नहीं आएगी।
- **मतदाता पर प्रभाव:** मतदाता बेहतर तरीके से सोचकर मतदान कर सकेंगे, क्योंकि भ्रम की स्थिति कम होगी।
- **भ्रष्टाचार में कमी:** चुनावी भ्रष्टाचार पर नियंत्रण संभव होगा, क्योंकि चुनाव सीमित अवधि में संपन्न होंगे।

आलोचनात्मक दृष्टिकोण और परिकल्पना की सीमाएँ

इस विचार के आलोचक इसे संघीय ढांचे, राज्यों की स्वायत्तता, और संवैधानिक मर्यादाओं के लिए एक चुनौती मानते हैं।

(1) **संघीय ढाँचे पर प्रभावः** संविधान भारत को एक संघीय राष्ट्र के रूप में परिभाषित करता है, जिसमें केंद्र और राज्य दोनों की स्वायत्तता है। यदि चुनाव एक साथ कराए जाते हैं, तो राज्यों की स्वतंत्र निर्णय क्षमता पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष नियंत्रण बढ़ सकता है।

(2) **कार्यकाल का कृत्रिम समायोजनः** कुछ विधानसभाओं का कार्यकाल घटाना और कुछ का बढ़ाना लोकतांत्रिक सिद्धांतों की दृष्टि से विवादास्पद हो सकता है।

(3) **स्थानीय मुद्दों का दब जानाः** एक साथ चुनाव होने पर राष्ट्रीय मुद्दे प्राथमिकता ले सकते हैं और स्थानीय समस्याओं पर ध्यान कम हो सकता है।

(4) **संसाधनों का भारी दबावः** एक साथ चुनाव कराने पर चुनाव आयोग और सरकार को लाखों मतदान केंद्रों, करोड़ों मतपत्रों/ईवीएम, और लाखों कर्मचारियों की एक साथ व्यवस्था करनी होगी, जो व्यवहारिक रूप से अत्यंत जटिल है।

संभावित कार्यान्वयन रणनीति

यदि इस परिकल्पना को लागू करना हो, तो इसके लिए निम्नलिखित चरण सुझाए जा सकते हैंः

चरण 1: राजनीतिक दलों से व्यापक संवाद और सर्वसम्मति।

चरण 2: विधिक और संवैधानिक ढांचे में परिवर्तन।

चरण 3: चरणबद्ध कार्यान्वयन – दो समूहों में राज्यों का चुनाव।

चरण 4: निर्वाचन आयोग द्वारा संसाधनों का पुनर्गठन।

चरण 5: जागरूकता अभियान और प्रशासनिक प्रशिक्षण।

"एक राष्ट्र, एक चुनाव" की परिकल्पना सैद्धांतिक रूप से जितनी आकर्षक प्रतीत होती है, उसका व्यावहारिक क्रियान्वयन उतना ही जटिल, बहुआयामी और संस्थागत रूप से चुनौतीपूर्ण है। यह न केवल संवैधानिक या राजनीतिक इच्छा का विषय है, बल्कि यह एक सूक्ष्म और विस्तृत प्रशासनिक तैयारी की भी माँग करता है। चूंकि भारत एक अत्यंत विशाल, विविध और संघीय लोकतंत्र है, इसलिए इस विचार की व्यावहारिकता का मूल्यांकन कई स्तरों पर आवश्यक है। "एक राष्ट्र, एक चुनाव" विचार व्यवहारिक रूप से संभव तो है, लेकिन इसके लिए देष की चुनावी और प्रशासनिक संरचना में व्यापक बदलाव आवश्यक हैं। "एक राष्ट्र, एक चुनाव" एक ऐसा विचार है, जिसमें अद्वितीय संभावनाएँ और गंभीर जटिलताएँ दोनों हैं। जहाँ यह लोकतंत्र को अधिक पारदर्शी, सशक्त और सुसंगठित बना सकता है, वहीं इसके असंविधानिक, प्रशासनिक और राजनीतिक जोखिम भी स्पष्ट हैं। इसके सफल क्रियान्वयन हेतुः

- नवीन तकनीकी संसाधनों का विकास और विस्तार।
- व्यापक स्तर पर जन संवाद और जागरूकता हो।
- चुनाव आयोग और प्रशासन को संसाधन और संरचना उपलब्ध कराई जाए।
- एक चरणबद्ध एवं लचीली रणनीति अपनाई जाए।
- मतदाता साक्षरता और प्रशिक्षण।
- प्रशासनिक समन्वय और सुरक्षा प्रबंधन।
- ईवीएम और लॉजिस्टिक्स का सशक्त ढांच।
- सभी राजनीतिक दलों की सहमति और सहभागिता सुनिश्चित हो।

इन सब तत्वों का समावेश आवश्यक है।

''एक राष्ट्र, एक चुनाव'' की परिकल्पना भारतीय चुनाव प्रणाली को कम खर्चीला, अधिक प्रभावी और समन्वित बनाने की दिशा में एक महत्वाकांक्षी प्रस्ताव है। यह विचार न केवल एक प्रणालीगत सुधार है, बल्कि यह देश के लोकतंत्र को अधिक स्थिर और सक्रिय बनाने का माध्यम भी बन सकता है। हालांकि इसके क्रियान्वयन में संविधानिक संशोधन, राजनीतिक सहमति, प्रशासनिक तैयारी और व्यापक जनसमर्थन की आवश्यकता होगी, लेकिन यदि यह सभी पक्षों की भागीदारी से लागू किया जाए, तो यह 21वीं सदी के भारत में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली की एक सशक्त पहचान बन सकता है।

निष्कर्ष

"एक राष्ट्र, एक चुनाव" की परिकल्पना आधुनिक भारत के लोकतांत्रिक ढांचे में एक क्रांतिकारी और नवाचारी विचार के रूप में उभर कर सामने आई है। यह विचार न केवल देश की चुनावी प्रणाली को संगठित और दक्ष बनाने का प्रयास है, बल्कि यह सुशासन, विकासात्मक स्थायित्व, नीति–निर्माण की निरंतरता और संसाधन की बचत जैसे महत्त्वपूर्ण पक्षों से भी जुड़ा हुआ है। हाल के वर्षों में केंद्र सरकार द्वारा इस विषय पर गंभीर विमर्श और संस्थागत प्रयास किए गए हैं। कोविंद समिति, विधि आयोग, और नीति आयोग जैसी संस्थाओं ने इसके संवैधानिक, प्रशासनिक, विधिक और तकनीकी पहलुओं का विष्लेशण किया है। चुनाव आयोग ने भी इसकी व्यवहारिकता के संबंध में स्पष्ट किया है कि यदि आवश्यक संसाधन और समय दिया जाए तो यह प्रणाली लागू की जा सकती है। इस विचार के पक्ष में प्रस्तुत तर्कों में चुनावी खर्च की कटौती, प्रशासनिक दक्षता, नीति निर्माण में निरंतरता, मतदाता जागरूकता और लोकतंत्र की मजबूती जैसे महत्त्वपूर्ण लाभ शामिल हैं। वहीं, इसके विरोध में संवैधानिक संशोधनों की जटिलता, संघीय ढांचे पर संभावित प्रभाव, राज्यों की स्वायत्तता में हस्तक्षेप, और राजनैतिक सहमति की कठिनाइयाँ जैसे गंभीर प्रश्न भी उठाए गए हैं। यह स्पष्ट है कि "एक राष्ट्र, एक चुनाव" जैसी अवधारणा को जल्दबाजी में लागू नहीं किया जा सकता। इसके लिए समग्र रणनीति, सर्वदलीय संवाद, संविधान में आवष्यक संशोधन, मतदाता शिक्षा, और प्रशासनिक तैयारी की आवश्यकता है। इससे न केवल लोकतंत्र को व्यवस्थित किया जा सकता है, बल्कि भारत को वैश्विक लोकतंत्रों में एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि "एक राष्ट्र, एक चुनाव" कोई असंभव लक्ष्य नहीं, बल्कि एक दीर्घकालिक दृष्टिकोण से क्रियान्वित करने योग्य सुधार है, जो भारत के लोकतांत्रिक भविष्य को अधिक सशक्त, समन्वित और समावेशी बना सकता है, बशर्ते इसे संवैधानिक मर्यादाओं, संघीय संतुलन और जनसहमति के साथ लागू किया जाए।

संदर्भ सूची

1. यादव, योगेन्द्र (2021) *भारतीय लोकतंत्र की दशा और दिशा,* समकालीन विमर्श प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. राजन, अजय (2022) *संविधान और संघीय ढांचे में चुनावी समन्वय,* भारतीय विधि विद्या प्रतिष्ठान, दल्ली।
3. भारत सरकार (2023) एक राष्ट्र, एक चुनाव पर उच्च स्तरीय समिति की प्रारंभिक रिपोर्ट, विधि और न्याय मंत्रालय, नई दिल्ली।
4. विधि आयोग (2018) एक साथ चुनावः भारत में व्यवहार्यता का अध्ययन (रिपोर्ट संख्या 255), भारत सरकार, नई दिल्ली।
5. भारत निर्वाचन आयोग (2022) भारत में चुनावी सुधारः निष्पक्षता, पारदर्शिता और सुदृढ़ीकरण के उपाय, भारत निर्वाचन आयोग प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. नीति आयोग (2017) *चुनावी सुधार हेतु सुझावः एक राष्ट्र, एक चुनाव की आवश्यकता,* नीति आयोग, नई दिल्ली।
7. लोकसभा सचिवालय (2020) *एक राष्ट्र, एक चुनाव विषय पर संसदीय समिति की रिपोर्ट,* लोकसभा सचिवालय प्रकाशन, नई दिल्ली।

****